Gyanvividha, Vol.-2; Issue-1 (January-March) 2025 : PP-127-133

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-1 (Jan.March) 2025
Page No.- 127-133
©2025 Gyanvividha
www.journal.gyanvividha.com

डॉ. नवल पाल
गांव-साल्हावास, जिला-झज्जर, हरियाणा पिन-124146.

Corresponding Author :

डॉ. नवल पाल
गांव-साल्हावास, जिला-झज्जर, हरियाणा पिन-124146.

वाल्मीकि के श्रीराम : अतीत और वर्तमान के आलोक में

भूमिका : आदिकवि महर्षि वाल्मीकि रचित आर्षग्रन्थ आदिकाव्य 'रामायण' विश्व साहित्येतिहास की अनुपम उपलब्धि है। आदिकवि ने इस अनूठी कृति में भारतीय सांस्कृतिक विरासत को प्रस्तुत करने के माध्यम से तत्कालीन समाज की सटीक व्याख्या ही प्रस्तुत नहीं की अपितु जो पदचिह्न समय के शिलालेख पर अंकित किए हैं, वे परवर्ती रामकथा का उपजीव बनकर आज भी विश्व मानवता का मार्गदर्शन कर रहे हैं। उन्होंने इस ग्रन्थ में श्रीराम को अतिमानवीय एवं मानवीय दोनों रूपों में प्रस्तुत किया है। वाल्मीकि के श्रीराम वह प्रकाश-स्तम्भ हैं, जो अनादिकाल से अनन्त काल तक विश्व मानवता को शक्तिशील सामर्थ्य और मर्यादा का आलोक प्रदान करते रहेंगे।

शब्द बीज : आदिकवि, अनुपम, समाज, उपजीव, मर्यादा, अनन्त, भवसंभव, सुमेल।

वाल्मीकि के सर्वशक्तिमान राम ही तुलसी के "मंगलभवन, अमंगलहारी, मर्यादा पुरुषोत्तम बन गए जो शक्ति, शील, सौंदर्य का सुमेल है। जो सन्त हितार्थ दुष्टभजनार्थ एवं लोक कल्याणार्थ निर्गुण से सगुण रूप में अवतरित होते हैं। सगुण-निर्गुण भेद तिरोहित हो जाता है और उभय भवसंभव खेद हरण करते हैं। विवेच्य विषय-वाल्मीकि के 'श्रीराम' अतीत और वर्तमान के आलोक में विवेचन की सुविधाार्थ उनके अतीत, जिसमें वह ईश्वरता और मानवीय दोनों रूपों में विवेचित करेंगे। तत्पश्चात् वर्तमान के आलोक में विवेचना करेंगे।

श्रीरामः - अतीत के संदर्भ में : सर्वविदित है, महर्षि वाल्मीकि ने श्रीराम को ईश्वरता से परिपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया है। इस तथ्य का प्रथम साक्षात्कार ताड़का वद्योपरांत होता है; जब वह देवता एवं सिद्गणों द्वारा प्रसंशित होते हैं:

"निहत्थ तां यक्षसुतां स रामः, प्रशस्यमानः सुरसि सद्यैः।"[1]

आततायी दशानन से त्रस्त समस्त देवगणों की प्रार्थना पर श्रीहरि ने स्वयं को

अवधापति दशरथ नरेश के चार पुत्रों के रूप में प्रकट करके अवतार-लीला करने का निश्चय सुनाया तो देवगणों ने कहा -

"तमेव हत्त्वा सबलं सबान्धवं विरावणं
रावणमुग्रपौरुषम्।
स्वर्गलोकमागच्छ गतज्वरश्चिरं सुरेन्द्रगुप्तं
गतदोषकल्मषम।।"[2]

इस तथ्य की पुष्टि महर्षि वाल्मीकि निम्नांकित श्लोक से भी करते हैं कि स्वयं श्री हरि विष्णु ने स्वयं दशरथ के पुत्रें के रूप में अवतार ग्रहण किया है-

"स हि देवैरुदीर्णस्य रावणस्य वधार्थिभिः।
अर्थितो मानुषे लोके जज्ञे विष्णुः सनातनः।।"[3]

समस्त रामायण महाकाव्य में सर्वत्र श्रीराम को परब्रह्म स्वरूप का प्रत्यक्षतः पराक्षतः वर्णन है। स्वयं सीता भी इस सत्य से अनभिज्ञ नहीं है। वह हनुमान के माध्यम से श्रीराम तक अपना संदेश पहुंचाती हैः-

"न दानवा न गन्धर्वा ना सुरा न मरुद्गणाः।
त्व राम रणे शक्तास्तथा प्रति समासितुम्।।[4]

वाल्मीकिय रामायण के गंभीर अनुशीलन से श्रीराम की शक्मिता, लोकोत्तर धार्मप्रियता, शरणागत वत्सलताव ईश्वरत्ता का सर्वत्र प्रतिपादन होता है। विभीषण को शरणागति प्रदान करने, श्रीराम के अतुलनीय सौन्दर्य-वर्णन, कपोत के आतिथ्य के उदाहरण देने, पर महर्षि कण्डु की गाथा पढ़ने एवं अपनी शरण में आए प्राणियों को अभयदान देने के स्वाभाविक नियम को घोषित करने एवम् प्रतिवादी सुग्रीव का यह कथन उद्घाटित करता है कि राम अन्य कोई और नहीं अपितु सगुण रूपधाारी परमात्मा हैं-

"किमत्र चित्रं धार्मज्ञ लोकनाथशिरोमणे!
यत त्वमार्य प्रभाषेथाः सत्त्ववान सत्पथें स्थितः।।"[5]

महर्षि वाल्मीकि ने सुन्दरकांड में कितनी स्पष्टता से उनकी पारबह्मता का चित्रण किया है। वह लिखते हैं कि राम सम्पूर्ण सृष्टि को क्षणांश में नष्ट कर पुनः उसका सृजन करने में समर्थ हैं-

"सत्यं राक्षसराजेन्द्र श्रुवुष्व वचनं मम।
रामदासस्य दुतस्य वानरस्य विशेषतः।।
सर्वोल्लोकान् सुसंहृत्य सभूतान सचराचरान्
पुनरेव तथा स्त्रष्टुं शक्ता रामो महायशाः।।"[6]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अपनी आलोकिकता व परब्रह्मता के कारण ही श्रीराम ईश्वर का सगुण रूप में विख्यात हुए और युग-युगान्तरों तक इसी रूप में आराध्य बने रहेंगे। सर्वविदित है कि आदिकवि ने श्रीराम को उनके अतिमानवीय व ईश्वरीय गुणों के साथ प्रस्तुत किया है। इसकी पुष्टि ताड़का वध, शिवधनुष खंडित करने, अहिल्या उद्धार, दण्डकवन के राक्षसों का विनाश, समुद्र को सबक सिखाने, बाली वध, रावण सहित अतिबलशाली राक्षसों का वध इत्यादि प्रसंगों से स्पष्ट है। काल के साथ मंत्रणा में काल का उनसे निजलोक गमन हेतु अनुरोध करने से स्पष्ट है कि पृथ्वी लोक पर उनका अवतार दुष्ट भंजनार्थ ही है, एवं सृष्टि का प्रत्येक क्रियाकलाप उन्हीं से संचालित होता है।

श्रीराम के मानवीय गुण : रामायण विश्व के समस्त रामकाव्यों का उपजीवय ग्रंथ रहा है। यद्यपि तुलसी ने उन प्रसंगों से बचने का प्रयास किया है, जो उनकी मर्यादापुरुषोतम की छवि के प्रतिकूल पड़ता है या उन्होंने भी स्वामी दयानंद सरस्वती के गुरु स्वामी विरजानंद की भांति इस सत्य को आत्मसात् कर लिया था, कि- महाभारत के परवर्ती सभी वेद-उपनिषदों में कतिपय प्रक्षिप्त अंश हैं। तथैव तुलसीदास ने भी उन्हें परब्रहम् मानकर उनमें किचिंद् मात्र न्यूनता को अस्वीकार कर उन्हें मंगल-भवन, अमंगल-हारी, निर्गुण का सगुण रूप स्वीकार किया है। हम भी जो वाल्मीकि रचित रामायण है, उसी को प्रामाणिक मानकर विवेचना करने को बाध्य हैं। शम्बुक-वध जैसे प्रसंग प्रक्षिप्त मानकर हमें उनके मानवीय गुणों पर ध्यान केन्द्रित करना होगा, क्योंकि उन्हीं का व्यक्तित्व जन-जन के चेतन में रामराज्य के स्वप्न के रूप में संचित है। यद्यपि मानवीय रूप में श्रीराम् असंख्य गुण निधान ही सिद्व होते हैं। उनके गुणों का वर्णन करने में नारद,

सारद, शेष, महेस तक असमर्थ हैं, तथापि हम विस्तार करने में न जाकर कतिपय प्रमुख गुणों की ही विवेचना करेंगे।

1. मर्यादा पुरुषोत्तमः- वाल्मीकि रामायण में श्रीराम सर्वत्र मर्यादित आचरण करते हुए परिलक्षित होते हैं। उन्हें पुरुषोतम अर्थात् पुरुषों में उत्तम की उपाधि प्राप्त हुई। जीवन के हर क्षेत्र में वह मर्यादा की रक्षा करते हैं। उनकी मर्यादा प्रियता को निम्नांकित बिन्दुओं पर विवेचित किया जा सकता है -

(क) आदर्श पुत्रः- श्रीराम लोक विख्यात आदर्श पुत्र है। जब उन्हें ज्ञात होता हैं कि उन्हें वनवास दिया गया है तो वे इसे सहर्ष स्वीकार करते हैं -

"एवमस्तु गमिष्यामि वनं वस्तुमहंत्वितः।
जटाचीरधरो राज्ञः प्रतिज्ञामनुपालयन।।"[7]

यही नहीं, वह अपनी माँ कौशल्या के उनके साथ वनगमन के आग्रह को भी यह कहकर टाल देते हैं कि स्त्री को पति के संग रहना ही शास्त्रोक्त है -

"यावज्जीवति काकुत्स्थः पिता में जगतीपतिः।
शूश्रूषा क्रियतां तावत् स हि धर्मः सनातनः।।"[8]

जब नरेश दशरथ उन्हें समझाते हैं कि तुम मुझे कैद करके स्वयं राजा बन जाओ क्योंकि मैं वचनबद्ध हूँ, तुम नहीं, तो वह अर्थात श्रीराम बड़े धैर्य के साथ कहते हैं कि पिता का वचन पालन ही एक पुत्र के लिए परम धर्म है -

"नव पञ्च च वर्षाणि वनवासे विहृत्य ते।
पुनः पादौ गृहीष्यामि प्रतिज्ञान्ते नराद्यिपः।।"[9]

(ख) आदर्श भ्राताः- श्रीराम के मन में अपने तीनों अनुजों के प्रति अथाह प्रेम है। लक्ष्मण तो उनके प्रेम के वशीभूत होकर राजसी सुख, पत्नी और माता-पिता को त्याग कर वन में चले आए। भरत पर उनका अटूट स्नेह है, तभी तो वह चित्रकूट में भरत आगमन पर लक्ष्मण के रोष को शांत करते हुए कहते हैं -

"प्राप्तकालं यथैषोद्वस्मान् भरतो द्रष्टुमर्हति।
अस्मासु मनसाप्येष नाहितं किंचिदाचरेत्।।"[10]

चित्रकूट में राम-भरत मिलन् का दृश्य शिलाओं तक को विदीर्ण कर देता है। अपने चरणों में पड़े भरत को श्रीराम गद्गद् होकर कण्थ से लगा लेते हैं

"आघ्राय रामस्तं मूर्धि परिष्वज्य च राघवम्।
अडङ्के. भरतमारोर्प्य पर्यपृच्छत सादरम् ।।"[11]

लंकाविजय तथा रावणवध के पश्चात् सीता सहित अयोध्या आगमन से पूर्व वह भरत के मनोभावों को समझने हेतु हनुमान को भेजते हैं। यदि भरत की राज्य में आसक्ति हो गई हो तो वह उनसे राज्य वापिस लाने की अपेक्षा अन्यत्र रहने की इच्छा प्रकट करते हैं। वह अनुज भरत के सुख में बाधा उपस्थित नहीं करना चाहते-

"संगत्या भरतः श्रीमान् राज्येनार्थो स्वयं भवेत्।
प्रशास्तु वसुधां सर्वामखिलां रघुनन्दनः।।"[12]

(ग) एकनिष्ठ पत्नीव्रतः- श्रीराम का सीता से अतुलनीय प्रेम है। वह सीता को सदैव निज हृदय में रखते है। उनका चित सदैव वैदेही में अनुरक्त रहता है-

"रामश्च सीतया सार्धं विजहांर बहनृतून्।
मनस्वी तद्गतमनास्तस्या हृदि समर्पितः।।"[13]

दोनों सद्गुण निधान होने के कारण पारस्परिक प्रेम बंधन में रहते हैं। उनका दाम्पत्य जीवन प्रेम से परिपूर्ण है -

"प्रिया तु सीता रामस्य दाराः पितृकृता इति।।
गुणाद्रपगुणाच्चापि प्रीतिभूयोक्षमिवर्धते।"[14]
तस्याश्च् भर्तादिगुणं हृदये परिवर्तते।।[15]

सीता को वन गमन से रोकने के लिए वह उसे वन के दुःखो का वर्णन करते हुए समझाते हैं। वास्तव में वह उसे किसी भी प्रकार की पीड़ा से बचाना चाहते हैं -

"हितबुद्ध्या खलु वचो मयैतद्विधीयते।
सदा सुखं न जानामि दुःखमेव सदा वनम्।।"[16]

दण्डकारण्य प्रवास के समय भी वह सीता के सुखों का विशेष ध्यान रखते हैं। वह लक्ष्मण से कहते हैं कि ऐसे स्थान पर पर्णकुटी का निर्माण करो, जहाँ वैदेही का मन प्रपुफल्लित रहे-

"रमते यत्र वैदेही त्वमहं चैव लक्ष्मण।
तादृशो दृश्यतां देशः संनिकृष्ट जलाशयः।।"[17]
"वनरामण्यकं यत्र जलरामण्यकं तथा।
संनिकृष्टं च यस्मिस्तु समित्पुष्पकुशोदकम्।।"[18]

श्रीराम ने मारीचवध एवं शूपर्णखा के भाईयों के वध से पूर्व भी जानकी की सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध किया था। दुर्दैववश सीताहरण हो गया तो वह जानकी-विरह में विक्षिप्तों की भांति रुदन करते हैं-

"यां विना नोत्सहे वीर मूहुर्तमपि जीवितुम्।
क्वसा प्राणसहाया सीता सुरसुतोपमा।।"[19]

वैदही वियोग में संतप्त श्रीराम को प्रकृति के सुखद उपादान भी कष्टकर प्रतीत होते हैं-

"यानि स्म रमणीयानि तथा सह भवन्ति में।
तान्येवारमणीयानि जायन्ते में तया बिना।।"[20]

(घ) आदर्श मित्रः- श्रीराम अपने मित्र निषाद् से अतिशय प्रेम करते हैं। श्रीराम-सुग्रीव मित्रता अनुकरणीय है। जब वह सुग्रीव से प्रथम बार भेंट करते हैं और उसे बाली के हाथों उत्पीड़ित और अपमानित देखते हैं तो स्पष्ट घोषणा करते हैं-

"आत्मानुमानात् पश्यामि मग्रस्तवं शोक सागरे।
त्वामहं तारयिष्यामि बाढं प्राप्स्यसि पुष्कलम्।।"[21]

(ड़) आदर्श राजाः- श्रीराम एक आदर्श राजा हैं। उनके रामराज्य का स्वप्न भारतीयों के नेत्रों में आज भी झिलमिला रहा है। उन्होंने शास्त्रोक्त रीति से कर संग्रह किया। उनके बल और पराक्रम के समक्ष भूमण्डल के सम्राट तो क्या देवगण भी नहीं ठहर सकते थे। वे बल-निधान प्रजा की हर प्रकार से रक्षा करने को तत्पर रहते थे। वे समस्त विधाओं में निपुण थे। उनमें दर्प**,** ईष्या**,** क्रोध का सर्वथा अभाव था। उनके कर संग्रह पर महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं कि वे भ्रमरों की भांति मकरन्द कर ग्रहण करते थे**,** जिससे प्रजा को तनिक भी कष्ट न हों-

"सत्संग्रहानुग्रहणे स्थानविन्तिग्रहस्य च।
आयकर्मव्युपायज्ञः संदृष्टण्यय कर्मवित्।।"[22]

अहिल्या उद्वार प्रसंग में श्रीराम की नारियों के प्रति श्रद्धाभावना उदघाटित होती है। गौतम ऋषि के श्राप से ग्रस्त अहिल्या निर्जन कुटिया में तपस्यारत थीं। उन्होंने सहस्त्राब्दियों से उपेक्षित**,** अपमानित अहिल्या के चरण-स्पर्श करके उनकी मान-वृद्वि की और उनका उद्वार कियाः-

"सा हि गौतमवाक्येन् दुनिरीक्ष्या बभूवह
त्रयाणामपि लोकानां यावद् रामस्य दर्शनम्।।"[23]
"शापस्यान्तमुपागम्य तेषां दर्शनमागता।।
राघवौ तु तदा तस्याः पादौ जगृहतुर्मुदा।"[24]

भरत द्वारा बार-बार अनुरोध करने के उपरांत भी श्रीराम अपने पिता के वचन पालनार्थ नियमपूर्वक वनवास के वचन पर ही अडिग रहते हैं। मर्यादा से विमुख नहीं होते-

"वनवासं वसन्नेव शुचिर्नियत भोजनः।
मूलपुष्पफलैः पुण्यैः पितृन् देवांश्च तर्पयन्।।"[25]

राजा के लिए कुशल राजनीतिज्ञ होना अनिवार्य है**,** क्योंकि इसके अभाव में वह कुटिल राजाओं द्वारा वंचना का शिकार हो जाता है। श्रीराम पंचपटी में भरत को राजनीति के प्रत्येक पक्ष पर ध्यान केन्द्रित करने की सलाह देते हैं। वह उन्हें शत्रुपक्ष के अठ्ठारह और अपने पक्ष के पन्द्रह तीर्थों की तीन-तीन अज्ञात गुप्तचरों द्वारा पडताल करने**,** शत्रु को निर्बल न समझने**,** वैश्यवर्ण तथा कृषकों पर विशेष अनुग्रह रखने पर्याप्त मात्रा में हाथी**,** घोड़े**,** गाय आदि रखने**,** धन-धान्य**,** अस्त्र-शस्त्र**,** जल**,** यन्त्र**,** शिल्पी**,** धनुर्धरों**,** सैनिको**,** कोषाध्यक्षों पर गहन दृष्टि रखने**,** नीर-क्षीर विवेक से न्याय करने**,** वृद्धो**,** बालकों**,** वैद्यों**,** गुरुजनों**,** तपस्वियों देवताओं**,** अतिथियों**,** पंडितों आदि का सम्मान करने आदि की सलाह देते हैं ताकि उनका राज्य निष्कंटक रहे-

"राजा तु धर्मेण हि पालयित्वा महीपतिर्दण्डधरः
प्रजानाम्।
अवाप्य कृत्स्त्रां वसुधा यथावदितश्च्युतः स्वर्गमुपैति
विद्वान।।"[26]

आदर्श राजा राज्य का पालन-पोषण करते हैं। उन्हें राज्य सीमा के अन्तर्गत समस्त प्राणियों से अनुराग होता है। श्रीराम को भरत की सेना से पीड़ित पशु-पक्षियों की व्याकुलता व्यथित करती हैः-

"गजयुथानि वारण्ये महिषा वा महावने।
वित्रासिता मृगाः सिंहैः सहसा प्रदुता दिशः।।"[27]
"राजा वा राजपुत्रो वा मृगयामटते वने।

अन्यद्धाश्वापदं किंचित सौमित्र ज्ञातुमर्हसि।।"[28]

राजा श्रीराम स्वयं को वसुधा का पुत्र मानकर पुत्रवत् पालन करते हैं। वह रावण की स्वर्णमयी लंका के प्रलोभन में नहीं पड़ते। उन्हें तो जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादीप गरीयसी प्रतीत होती है। राजा बनने से पूर्व वह एक श्रेष्ठ नागरिक की भांति दृष्टिगोचर होते हैं। वह सदैव सत्यभाषी, जितेन्द्रिय, दयालु, शरणागत-वत्सल, उदार, कुलोचित आचार-विचार, क्षत्रिय धर्म प्रवृत, शास्त्रसम्मत आचरण करते थे। तभी तो प्रजा उन्हें प्राणों की भांति प्रेम करती थी-

"स तु श्रेष्ठर्गुणैर्युक्तः प्रजानां पार्थिवात्मजः।
बहिश्चर इव प्राणो बभूव गुणतः प्रियः।।"[29]

वह कामी बाली का वध करते हैं। उसके द्वारा अपने वध को अनुचित बताने पर वह कहते हैं कि राजा भरत की आज्ञा से तुम्हारे जैसे कामी को उचित दण्ड दिया गया है, क्योंकि यदि राजा पापी को उचित दण्ड नहीं देता तो उसे स्वयं उसके पाप का भागी होना पड़ता हैः-

"वयं तु भरतादेशावधिं कृत्वा हरीश्वर।
त्वद्विधान् भिन्नमर्यादान् निग्रहीतं व्यवस्थिताः।।"[30]

श्रीराम के पास दिव्यास्त्र थे। लेकिन उन्हें उनकी विनाशलीला का भान था। अतएव उन्होंने रावण की प्रचण्ड सेना का विध्वंस करने के लिए भी उनका प्रयोग नहीं किया। लवणासुर वध के लिए भी वह शत्रुघ्न को दिव्यास्त्रों को प्रयोग न करने की सलाह देते हैं-

"नायं मया शरः पूर्वं रावणस्य वधार्थिना।
मुक्तः शत्रुघ्न भूतानां महान् ह्रासो भवेदिति।।"[31]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि श्रीराम जन-जन के आराध्य हैं। उनका परब्रह्म स्वरुप प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में वाल्मीकि ने उद्घाटित किया है। यदि हम उनकी मानवीय रूप में विवेचना करते हैं तो वे धर्मनिष्ठ मर्यादा पुरुषोतम रूप में परिलक्षित होते हैं। वह एक आदर्श पुत्र, भाई, पति, राजा, राजनीतिज्ञ, एक श्रेष्ठ नागरिक होने के साथ-साथ उदार, शील व सत्यनिधि हैं।

श्रीराम :- वर्तमान के आलोक में-

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में उन प्रसंगों से बचने का प्रयास किया है जो उनकी मर्यादापुरुषोतम की छवि के प्रतिकूल पड़ते हों, लेकिन महर्षि वाल्मीकि ने उनको मानवीय रूप में भी प्रस्तुत किया है। श्रीराम गुण निधान है, लेकिन शम्बूक-वध, सीता अग्नि परीक्षा प्रसंग एवं पुनः शुचिता परीक्षा देने हेतु बाध्य करना इन कतिपय प्रसंगो द्वारा उन्हें आधुनिक युग में स्त्री-विरोधी एवं दलित-विरोधी सिद्ध करने की कुचेष्टाएँ की जा रही हैं। लेकिन सूक्ष्मावलोकन से ये कुतर्क खंडित हो जाते हैं। विवेचन की सुविधा हेतु हम उनकी तथाकथित न्यूनताओं का विश्लेषण करेंगे। रावण-वध एवं लंकाविजयोपरांत श्रीराम ने सीता से स्पष्ट रूप से कहा है कि उनके दिव्य रूप से आकर्षित हुए रावण के लिए संयम धारण करना असंभव रहा होगा। तुम शत्रु सदन में दीर्घकाल तक रही हो। अतएव तुम्हारी शुचिता संदिग्ध है। इसलिए तुम्हें अग्नि परीक्षा देनी होगी। वह इस बात की भी पुरजोर घोषणा करते हैं कि उन्होंने लंकाविजय एवं रावणवध मात्र तुम्हें प्राप्त करने हेतु ही नहीं किया है। उनका लक्ष्य अपने कुल की मान-प्रतिष्ठा की पुनर्प्राप्ति है-

"रक्षता तु मया वृत्तमपवादं च सर्वतः।
प्रख्यातस्यात्मवंशस्य न्यघ्ना, च परिमार्जता।।"[32]

सीता अग्नि-परीक्षा देकर जब श्रीराम के समक्ष उपस्थित होती है तो वह सहर्ष घोषणा करते हैं कि सीता पतिव्रता है, इस सत्य का उन्हें ज्ञान है क्योंकि सीता के तेज से रावण इन्हें स्पर्श करने का दुःसाहस तक नहीं कर सकता था। मिथिलेश कुमारी अग्निशिखा की भांति दुर्धर्ष एवं दूसरों के लिए अलभ्य हैं। यथा मनस्वी पुरुष कीर्ति का त्याग नहीं कर सकता तथैव मैं सीता से पृथक नहीं रह सकता। परन्तु तीनों लोकों में सीता की पवित्रता को प्रमाणित करने हेतु अग्नि-परीक्षा अनिवार्य थीः-

"प्रत्ययार्थ तु लोकानां त्रयाणां सत्यसंश्रयः
उपेक्षे चापि वैदेहीं प्रविशन्तीं हुताशनम्।।"[33]

स्पष्ट है कि उन्हें निजभार्या पर अटूट विश्वास है। अन्यान्य जनों की भांति श्रीराम भी लोकापवाद से

भयभीत प्रतीत होते हैं। जब उन्होंने गुप्तचर भद्र के मुख से सीता के चरित्र पर प्रश्नचिह्न लगते हुए सुने, तब लोगों के समक्ष सीता कहीं दुश्चरित्र का उदाहरण न बने, अन्यान्य स्त्रियाँ उनका उदाहरण देकर कुलटा न बनें, इस भय से वह वैदेही-परित्याग का कठोर निर्णय लेते हैं। वह अपकीर्ति से बचने हेतु अनुजों से कहते हैं-

"अप्यहं जीवितं जह्यां युष्मान् वा पुरुषर्षभाः।
अपवादभयाद् भीतः किं पुनर्जनकात्मजाम।।"[34]

गर्भवती प्राणप्रिया को वाल्मीकि आश्रम में भेजने का प्रबन्ध करते हैं। श्रीराम के इस कार्य के लिए स्त्री समर्थक कटु भर्त्सना करते हैं। लेकिन क्या विश्व के किसी भी भू-भाग में किसी नृप ने कहीं मेरी प्रियतमा अनुचित कार्य हेतु उदाहरण न बन जाए, इस भय से परित्याग किया है ? प्रथम-दृष्टया यह स्त्री-विरोधी कृत्य प्रतीत होता हैं, परन्तु गहनावलोकन सें स्वयं व सीता को भी आगामी युगों तक अपकीर्ति से बचाने का प्रयास ही सिद्ध होता हैं। श्रीराम जिस नृपश्रेष्ठ के लिए प्रजा इतनी प्रिय है कि वह उनकी प्रसन्नता हेतु पत्नी-परित्याग भी कर सकते हैं। विश्वभर में ऐसा द्वितीय उदाहरण नहीं मिलता। यदि हम उनके मानवीय होने पर ही विश्वास करते हैं तो इस कठोर निर्णय हेतु अतिशय साहस की आवश्यकता होती है। चौदह वर्षोपरांत जब सुख-दिवसों का प्रारम्भ हुआ तभी पत्नी वियोग हेतु बाध्य होना पड़ा, ऐसे पति की विवशता विचारणीय है। पत्नी-प्रेम से दीर्घकाल तक वंचित रहे, वात्स्ल्य-सुख की प्रतीति तक जो मनुष्य नहीं कर पाता, उसके दुर्भाग्य पर तरस आता है। जब उन्हें लव-कुश के निजसुत होने का प्रमाण मिलता है तब उनकी पुनः सीता को ग्रहण करने की कामना हुई तब भी पुनः जनापवाद की स्थिति का सामना न करना पडे, इस भय से पुनः वैदही को शुद्धता प्रमाणित करने हेतु उन्होंने बाध्य किया ताकि उनकी कीर्ति अक्षुण्ण रहे। लेकिन जब सीता पवित्रता प्रमाणित करने हेतु भूमि में समा गई, तब श्रीराम वह अपने प्रभाव का प्रयोग करके पुनः पृथ्वी से सीता की पुनः वापसी हेतु उद्यत हो गए। वह जनसाधारण की भांति विलाप् करने लगेः-

"दण्डकाष्ठमवष्टभ्यः वाष्पण्याकुलितेक्षणः।
अवाक्शिरा दीनमना रामो ह्यासीत् सुदुःखितः।।"[35]

वैदही-वनवास के उपरांत श्रीराम ने न तो पुनः विवाह किया और न ही ऐश्वर्य भोग किया। वह उदासीन जीवनयापन करते रहे। ऐसे उदाहरण विश्व इतिहास में दुलर्भ हैं। शम्बूक-वध भ्रमंग द्वारा भी वर्तमान में श्रीराम की कटु आलोचना करते हुए उन्हे दलित विरोधी प्रमाणित किया जाता है। लेकिन प्रत्येक युग के अपने युग सत्य होते है। शूद्र जम्बूक सदेह स्वर्गलोक जाकर देवत्व प्राप्ति हेतु इच्छुक तपस्यारत्त था। यह विधि-नियमों के प्रतिकूल था। अतः उसका वध करना उनकी दृष्टि में उचित था। लेकिन यहाँ भी एक प्रश्न उपस्थित होता है कि जो राम भीलनी के उच्छिट बेर सहर्ष खाते हैं, निषाद राज के मित्र हैं, जो रीछ-वानरों की मदद से लंका विजय करते है, वह शूद्र विरोधी कैसे हो सकते है? इस आधार पर भी शम्बूक-वध प्रसंग पक्षितांश प्रतीत होता है। राम राज्य में प्रजा स्वर्ग सदृश सुखों का उपभोग करती थी। रामराज्य आज एक मुहावरा बन चुका है। उस समय राम राज्य सर्वश्रेष्ठ राज्य था। सर्वत्र सुख-शान्ति, स्वच्छता व स्वस्थता का साम्राज्य थाः-

"आसन प्रजा धर्मपरा रामे शासति नानृताः।
सर्वे लक्षण सम्पन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः।।"[36]

निष्कर्षः- रामराज्य राजनीति का आदर्श है। उसका स्वप्न आज तक भारतीय जनमानस में बसा हुआ है। राम को प्रजा और प्रज्ञा को राम प्राणों से भी प्रिय थे। लेकिन तथाकथित दलित-समर्थकों, नारीवादियों और वामपंथियों द्वारा उन्हें कुख्यात करने का षड्यंत्र किया जा रहा है। आधुनिक पीढ़ी भी उनके बहकावे में श्रीराम पर प्रश्नचिह्न लगाती है। लेकिन इस प्रश्न का उत्तर इस तथ्य में निहित है कि यदि हम उन्हें निर्गुण ब्रह्म का सगुण रूप मानते हैं तो उनका जीवन-चरित लीलामय है और यदि महापुरुष मानते हैं तो उनमें भी कतिपय न्यूनताएं स्वीकार करने हेतु तैयार रहना चाहिए। द्वन्द्व में फंसकर उनके जीवन चरित को मलिन होने से बचाएँ। तथापि वाल्मीकि कृत रामराज्य भारतीय

राजनीति का आदर्श है। उनका जीवन चरित्र युग-युगान्तर तक मानवता का पथ आलोकित करता रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण, गीता प्रेस गोरखपुर, बालकाण्ड, सर्ग **27** श्लोक **36,** पृ.सं.**-28.**
2. वही, बालकाण्ड, सर्ग-**15,** श्लोक **34,** पृ.सं.**-14.**
3. वही, अयोध्याकाण्ड, सर्ग **1,** श्लोक **7** पृ.सं.**-221.**
4. वही, सुन्दरकाण्ड, सर्ग-**67,** श्लोक **19,**पृ.सं.**-231.**
5. वहीं, किष्किंधा काण्ड, सर्ग-**6,** श्लोक **18,** पृ.सं.**-36.**
6. वहीं, सुन्दरकाण्ड, सर्ग-**51,** श्लोक **38,** पृ.सं.**-31.**
7. वहीं, अयोध्याकाण्ड, सर्ग-**19,** श्लोक **2,** पृ.सं.**-284.**
8. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**24,** श्लोक **13,** पृ.सं.**-304.**
9. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**34,** श्लोक **29,** पृ.सं.**-332.**
10. वहीं, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**97,** श्लोक **13,** पृ.सं.**-494.**
11. वहीं, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**100,** श्लोक **3,** पृ.सं.**-501.**
12. वहीं, युद्धकाण्ड सर्ग-**25,** श्लोक **17,** पृ.सं.**-643.**
13. वही, बालकाण्ड सर्ग-**77,** श्लोक **25,** पृ.सं.**-299.**
14. वही, बालकाण्ड सर्ग-**77,** श्लोक **26,** पृ.सं.**-299.**
15. वही, बालकाण्ड सर्ग-**77,** श्लोक **27,** पृ.सं.**-299.**
16. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**18,** श्लोक **6,** पृ.सं.**-314.**
17. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**15,** श्लोक **4,** पृ.सं.**-588.**
18. वही, अख्यकाण्ड सर्ग-**15,** श्लोक **5,** पृ.सं.**-588.**
19. वही, अख्यकाण्ड सर्ग-**58,** श्लोक **4,** पृ.सं.**-695.**
20. वही, किष्किंधाकाण्ड सर्ग-**1,** श्लोक **60,** पृ.सं.**-746.**
21. वही, किष्किंधाकाण्ड सर्ग-**10,** श्लोक **34,** पृ.सं.**-772.**
22. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**1,** श्लोक **26,** पृ.सं.**-223.**
23. वही, बालकाण्ड सर्ग-**50,** श्लोक **16,** पृ.सं.**-165.**
24. वही, बालकाण्ड सर्ग-**50,** श्लोक **17,** पृ.सं.**-165.**
25. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**109,** श्लोक **26,** पृ.सं.**-528.**
26. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**100,** श्लोक **86,** पृ.सं.**-508.**
27. वही, अयोध्याकाण्ड सर्ग-**96,** श्लोक **70,** पृ.स.**-413.**
28. वही, अयोध्याकाण्ड, सर्ग-**96,** श्लोक **8,** पृ.सं.**-413.**
29. वही, अयोध्याकाण्ड, सर्ग-**1,** श्लोक **11,** पृ.सं.**-222.**
30. वही, किष्किन्धाकाण्ड, सर्ग-**18,** श्लोक **25,** पृ.सं.**-796.**
31. वही, उत्तरकाण्ड, सर्ग-**100,** श्लोक **24,** पृ.सं.**-836.**
32. वही, युद्धकाण्ड, सर्ग-**116,** श्लोक **16,** पृ.सं.**-620.**
33. वही, युद्धकाण्ड, सर्ग-**118,** श्लोक **17,** पृ.सं. **62.**
34. वही, उत्तरकाण्ड, सर्ग-**45,** श्लोक **14,** पृ.सं.**-798.**
35. वही, उतरकाण्ड, सर्ग-**98,** श्लोक **2,** पृ.सं.**-900.**
36. वही, युद्धकाण्ड, सर्ग-**128,** श्लोक **105,** पृ.सं.**-661.**

•